वरुण गोयल, डॉ. वी.सी. गोयल,
राजेश अग्रवाल एवं इं. ओमकार सिंह

पश्चिमी राजस्थान के थार रेगिस्तान में जल जीवन मिशन की स्थिरता हेतु जल संचयन की महत्वपूर्ण तकनीकें

सतही जल स्रोतों की अनुपलब्धता के कारण, मारवाड़ क्षेत्र में पशु और जनमानस को पेयजल के संकट का सामना करना पड़ता है। बिखरी हुई बस्तियों के पैटर्न और मरुस्थलीय स्थलाकृति के कारण, सरकारी जल योजनाएं क्षेत्र की अधिकांश आबादी तक नहीं पहुँच पा रही हैं। राष्ट्रीय आवास सर्वेक्षण 2003 के अनुसार, इस क्षेत्र की कुल ग्रामीण बस्तियों के लगभग 51% क्षेत्र के जनमानस को सरकार की जलापूर्ति प्रणाली का पूर्ण तथा 16% को आंशिक लाभ प्राप्त हो रहा है, जबकि क्षेत्र की 33% आबादी पूर्णतः से इष्टतम जल आपूर्ति पर आश्रित है।

मारवाड़ शब्द संस्कृत शब्द मारुवत से बना है, जिसका अर्थ है मृत्यु की भूमि। इस क्षेत्र में राजस्थान राज्य के सात जिलेः जोधपुर, जैसलमेर, जालोर, बाड़मेर, नागौर, पाली और सिरोही सम्मिलित हैं। मारवाड़ क्षेत्र राजस्थान राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 39.4% है। इस क्षेत्र में अनियमित वितरण के साथ सीमित मौसमी वर्षा, वृहत दैनिक और मौसमी परिवर्तन के साथ उच्च वायुमंडलीय तापमान, तीव्र सौर विकिरण, तेज हवाएं, खारा भूजल और विरल वनस्पति जैसी विशेषताएं प्रमुख है। क्षेत्र का 10% हिस्सा रेत के टीलों से निर्मित है, और अन्य 90% में चट्टानें, संकुचित-नमक झील के तल और निश्चित टिब्बा क्षेत्र शामिल हैं। इस क्षेत्र की जलवायु प्रतिकूल है, इस क्षेत्र में वार्षिक तापमान सर्दियों में लगभग ठंडा तथा गर्मियों में 50°C से अधिक तक होता है। इस क्षेत्र में प्रत्येक तीन वर्ष में एक बार औसत से कम वर्षा पाई जाती है और प्रत्येक आठ साल में एक वर्ष अकाल पड़ता है।

राजस्थान सरकार द्वारा वर्ष 2005 में प्रस्तुत, जल संसाधन के एकीकृत विकास पर विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2001 में राज्य में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 840 घन मीटर/वर्ष थी, जिसके वर्ष 2050 तक घटकर 439 घन मीटर/वर्ष होने का अनुमान है, जबकि जल की कमी के लिए अंतर्राष्ट्रीय बेंचमार्क 1000 मीटर^3 है। इस क्षेत्र में वर्षा न्यूनतम होती है जिसका वार्षिक औसत लगभग 200 मिमी रहता है। यहाँ का भूजल खारा है और पीने या कृषि के लिए अनुपयुक्त है। यह अनुमान लगाया गया है कि भारत के 74% गाँवों में जल गुणवत्ता की कई समस्याएँ हैं, जिनमें राजस्थान का यह क्षेत्र भी सम्मिलित है, जलवायु परिवर्तन में तीव्र परिवर्तन के कारण, इस क्षेत्र में सूखा व अकाल की आवृत्ति में वृद्धि हुई है। इस क्षेत्र में औसतन एक दशक में छह सूखे के वर्ष देखे जाते हैं। बार-बार आने वाले सूखे और समग्र सूखा-रोधी रणनीति के अभाव के कारण मारवाड़ गंभीर पारिस्थितिक क्षरण से ग्रस्त है।

सतही जल स्रोतों की अनुपलब्धता के कारण, इस क्षेत्र में पशु और जन मानस को पेयजल के संकट का सामना करना पड़ता है। बिखरी हुई बस्तियों के पैटर्न और मरुस्थलीय स्थलाकृति के कारण, सरकारी जल योजनाएं क्षेत्र की अधिकांश आबादी तक नहीं पहुँच पा रही हैं। राष्ट्रीय आवास सर्वेक्षण 2003

के अनुसार, इस क्षेत्र की कुल ग्रामीण बस्तियों के लगभग 51% क्षेत्र के जनमानस को सरकार की जलापूर्ति प्रणाली का पूर्ण तथा 16% को आंशिक लाभ प्राप्त हो रहा है, जबकि क्षेत्र की 33% आबादी पूर्णतः से इष्टतम जल आपूर्ति पर आश्रित है। भागीदारी दृष्टिकोण और स्थान-विशिष्ट रणनीतियों की अनुपलब्धता के कारण, सरकारी योजनाओं के परिणामस्वरूप जन समुदायों ने, इस क्षेत्र में, रेगिस्तानी समुदायों को जीवित रहने में सहायक, सदियों से विकसित की गई पारंपरिक जल-संग्रहण और संरक्षण प्रणालियों की उपेक्षा की है। केंद्रीकृत योजनाओं ने इस पारंपरिक ज्ञान को विकास प्रक्रियाओं के हाशिये पर धकेल दिया है, जिसके परिणामस्वरूप यह क्षेत्र अब जल की भीषण कमी का सामना कर रहा है।

इन चुनौतियों का समाधान सदियों से विकसित निम्नलिखित महत्वपूर्ण तथ्यों, के माध्यम से प्रभावी ढंग से किया जा सकता है। इन महत्वपूर्ण तथ्यों से लोगों को अनुभव के आधार पर वर्तमान जलवायु परिवर्तनशीलता के अनुकूल होने में सहायता मिलेगी और फिर भविष्य की जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए तैयार रहने हेतु रणनीति विकसित हो पाएगी, साथ ही समुदायों के बीच गरीबी को दूर करने में भी योगदान प्राप्त हो सकेगा।

महत्वपूर्ण तथ्यः

- मारवाड़ विश्व का सबसे सघन आबादी वाला शुष्क क्षेत्र है जहां प्रति वर्ग किमी 83 व्यक्ति रहते हैं।
- मारवाड़, राजस्थान राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 40% भूभाग है, यहाँ की जनसंख्या और पशुधन क्रमशः राज्य की कुल जनसंख्या और पशुधन का 22% और 34% है।
- यद्यपि राजस्थान राज्य, विश्व के सर्वाधिक जल की कमी वाले क्षेत्रों में से एक है तथापि मारवाड़ क्षेत्र में जल उपलब्धता राजस्थान राज्य में भी सबसे न्यूनतम है।
- 2004 में UNFCCC द्वारा इस क्षेत्र को जलवायु परिवर्तन के लिए अत्यंत संवेदनशील क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया है।
- इस क्षेत्र में वार्षिक औसत वर्षा 200 मिमी है।
- इस क्षेत्र में सामान्यतः एक दशक में औसतन छह सूखे के वर्ष होते हैं। जबकि राज्य में मौसम संबंधी सूखे की संभावना 47% है।
- इस क्षेत्र में सूखे की आवृत्ति एक सामान्य घटना है, तथा इस क्षेत्र में विगत 50 वर्षों में से 43 वर्षों में सूखा पड़ा है।

मारवाड़ क्षेत्र में सूखे से प्रभावित जनमानस।

- इस क्षेत्र के भूजल स्तर में सामान्यतः प्रतिवर्ष 1-2 मीटर की दर से गिरावट दर्ज की जा रही है, जबकि कुछ क्षेत्रों में भूजल स्तर में गिरावट का मान 2-5 मीटर/वर्ष तक है।
- क्षेत्र के भूजल में TDS की सांद्रता 10,000 ppm तक पाई जाती है।

क्षेत्र में जल-जीवन मिशन की स्थिति

यदि विस्तार से समझें तो क्षेत्र की भौगोलिक विषमताएं जैसेः आबादी घनत्व कम होना और क्षेत्रीय स्तर पर जलापूर्ति की आधारभूत संरचनाओं का अभाव, इस महत्वाकांक्षी परियोजना के क्रियान्वयन में मुख्य चुनौतियां हैं। इसके अतिरिक्त, स्थाई जल स्त्रोतों से लाभार्थी तक की दूरी भी एक बड़ी समस्या है जिसे पाइपलाइन के माध्यम से पाटना आर्थिक व सामाजिक रूप से संभव प्रतीत नहीं होता है, इस क्षेत्र में प्रति व्यक्ति/दिन 55 लीटर जल की आपूर्ति करना भी एक कठिन कार्य है, विशेषकर उस स्थिति में जब क्षेत्र में कोई सदानीरा नदी उपलब्ध नहीं है, मरूस्थलीय क्षेत्र के कारण सतही वर्षा-जल संरक्षण के भी सीमित साधन हैं, तथा भूजल में भी TDS की मात्रा नियत सीमा से कई गुना अधिक है।

क्षेत्र में जल जीवन मिशन की परिकल्पना को पूर्ति रूप देने से पूर्व क्षेत्र के इतिहास को जानना आवश्यक है, थार रेगिस्तान के पारंपरिक समुदाय

राजस्थान में सूखे का एक दृश्य।

अपनी भूमि और पर्यावरण के संरक्षक और प्रबंधक हैं और उन्हें यह उत्तरदायित्व पीढ़ियों के माध्यम से सौंपा गया है। आखिर कैसे परंपरागत जल संरक्षण तकनीक के माध्यम से विश्व की सबसे घनी आबादी वाला मरूस्थलीय क्षेत्र होने का गौरव प्राप्त हुआ है, कैसे नवाचारों ने इन समुदायों को बेहतर जल प्रबंधन करने हेतु प्रेरित किया है और जल संरक्षण की इन तकनीक को परंपरा और धार्मिक रीति रिवाजों के साथ सम्बद्ध कर उसे अमर बना दिया है।

इस क्षेत्र में जल जीवन मिशन की सफलता के लिए स्थानीय ज्ञान पर आधारित समाधान उपलब्ध हैं इन्हें जानने से पूर्व यह भी जान लेना आवश्यक है कि जल संरक्षण की स्थानीय और परंपरागत तकनीकें क्या हैं तथा इन्हें कैसे आधुनिक ज्ञान के साथ जोड़कर हर घर हेतु नल से जल के लिए एक सतत जल-स्त्रोत के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है।

तालाब-तालाबों को ग्राम की जीवनरेखा कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। विश्व की पुरातन संस्कृतियों में से एक सिंधु घाटी की सभ्यता में भी जलाशय के रूप में इसके उदाहरण हैं। प्राचीन ग्रंथों में भी इसका महत्व बताया गया है। मत्स्यपुराण में कहा गया है कि 10 कुंओं के बराबर एक बावड़ी, 10 बावड़ियों के बराबर एक तालाब, 10 तालाबों के बराबर एक पुत्र और 10 पुत्रों के बराबर एक वृक्ष होता है।

थार मरुस्थल के अधिकांश ग्रामवासी सदियों से अपनी प्यास इन तालाबों से बुझाते आए हैं। इन तालाबों के आसपास के क्षेत्र को पवित्र पूजास्थल के रूप में विकसित किया जाता है जिसे

थार मरुस्थल के अधिकांश ग्रामवासी सदियों से अपनी प्यास इन तालाबों से बुझाते आए हैं। इन तालाबों के आसपास के क्षेत्र को पवित्र पूजास्थल के रूप में विकसित किया जाता है जिसे स्थानीय भाषा में ओरण कहते हैं। इसके सामाजिक कारण भी हैं जैसे यह पूजा के स्थल तालाबों के पास विकसित किए जाते हैं तो समस्त हितधारक न सिर्फ क्षेत्र को स्वच्छ बनाए रखते हैं अपितु समय-समय पर इसकी सफाई में भी अपना अहम योगदान श्रमदान के रूप में देते हैं, जो कि किसी भी तालाब को जीवित रखने हेतु आवश्यक है।

स्थानीय भाषा में ओरण कहते हैं। इसके सामाजिक कारण भी हैं जैसे यह पूजा के स्थल तालाबों के पास विकसित किए जाते हैं तो समस्त हितधारक न सिर्फ क्षेत्र को स्वच्छ बनाए रखते हैं अपितु समय-समय पर इसकी सफाई में भी अपना अहम योगदान श्रमदान के रूप में देते हैं, जो कि किसी भी तालाब को जीवित रखने हेतु आवश्यक है।

वर्षा जल या किसी झरने के जल के संचयन के लिए बनाए जाने वाले तालाबों का प्रचलन अत्यधिक प्राचीन है। गर्तभूमि पर जल का संचयन हो जाने से कुछ तालाब अपने आप निर्मित हो जाते रहे हैं। रामायण काल के तालाबों में शृंगवेरपुर का तालाब प्रसिद्ध रहा है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के निदेशक डॉ. बी.बी. लाल ने पुराने साक्ष्य के आधार पर इलाहाबाद से 60 किलोमीटर दूर खुदाई कर इस तालाब का अन्वेषण किया है। यह तालाब ईसा पूर्व सातवीं सदी में निर्मित किया गया था। महाभारतकालीन तालाबों में कुरूक्षेत्र का ब्रह्मसर, करनाल की कर्णझील, और मेरठ के पास हस्तिनापुर का शुक्रताल आज भी अस्तित्व में हैं।

नाडी-यह चरागाहों के मध्य स्थित ऐसा जल स्त्रोत होता है जो मुख्यत जीव-जंतुओं की प्यास बुझाने के काम आता है। यह जल स्त्रोत तालाब की तुलना में छोटा होता है और प्रायः आबादी क्षेत्र से दूर स्थित होता है। तालाब व नाडी का पृथक होना इस बात को इंगित करता है कि पुरातन काल से ही मनुष्यों एवं जीव-जन्तु के उपयोग हेतु जल स्त्रोत पृथक हुआ करते थे।

बेरी-ग्रीष्मकाल में जब तालाब या नाडी का सतही जल सूख जाता है, तब तालाब या बेरी में खुदाई करके एक बेरी का निर्माण किया जाता है, इसे पुनः पूरण कूप की संज्ञा भी दी गई है। इस कम गहराई के कुएं में धरती का जल प्राकृतिक रूप से रिसकर आता है जो तालाब पर एकत्रित जल की तुलना में अधिक सुरक्षित होता है।

टांका-अन्य सामुदायिक जलस्त्रोतों की अपेक्षा टांका एक व्यक्तिगत जल-स्त्रोत हो सकता है। क्षेत्र में पारंपरिक रूप से इसके निर्माण हेतु कृत्रिम वर्षा संग्रहण क्षेत्र बनाकर उसके बीच में एक गड्ढा बनाया जाता था जिसे उस समय राख के माध्यम से पक्का किया जाता था एवं उसे स्थानीय प्रजाती की घास से ढ़क दिया जाता था।

राजस्थान क्षेत्र में गहरे कुएं से पानी खींचते जनमानस।

वर्तमान समय में क्षेत्र में इसी प्रकार से टांका निर्माण कर क्षेत्र के अधिकांश लोग अपनी जल संबंधित आवश्यकताओं को पूर्ण करते हैं। समय के साथ-साथ टांका निर्माण को वैज्ञानिक रूप से अभिकल्पित किया जाने लगा है जिससे कम स्थान में अधिक व उच्च गुणता मानकों के अनुरूप वर्षा जल का संग्रहण किया जा सके।

आधुनिक भूजल पुनर्भरण तकनीकें

वैसे तो पश्चिमी राजस्थान में अधिकांश जगह भूजल खारा है किंतु कुछ जगह जलभृत, मीठे जल के स्त्रोत भी हैं उन स्थानों को चिन्हित कर वहां विभिन्न तरीकों से वर्षा जल का पुनर्भरण कर स्त्रोत को स्थाई सामुदायिक पेय-जल स्त्रोत के रूप में विकसित किया जा सकता है।

अन्तःस्यंदन कूप- यह तकनीक ऐसे हैण्डपम्प, बोरवेल पर कार्य कर सकती है जिनमें जल या तो बहुत कम हो या समाप्त हो गया हो इस तकनीक में बोर के चारों ओर जेसीबी की सहायता से स्थलाकृति के अनुसार गहरा गड्ढ़ा बनाया जाता हैं फिर उस गड्ढ़े को सबसे पहले बड़े-आकार के पत्थरों, फिर मझोले आकार के पत्थरों, और अंत में कंक्रीट डालकर परत दर परत बंद किया जाता है उसके पश्चात उस क्षेत्र में व्यर्थ बहने वाले वर्षा जल को उपयुक्त प्रवणता द्वारा इस अन्तःस्यंदन कूप की ओर स्थानांतरित कर दिया जाता है जिससे वर्षा के समय व्यर्थ होने वाला जल उक्त हैण्डपम्प/बोरवेल के भूजल को पुनः पूरित कर सके इस तकनीक में संग्रहित जल को वाष्पोत्सर्जन द्वारा होने वाली हानि से भी बचाया जा सकता है।

जलदायक संचयन एवं पुनःप्राप्ति प्रबंधनः

इस प्रकार की तकनीक में भी जल का भूजल में कृत्रिम पुनः पूरण किया जाता हैं किंतु इसका संचयन खारे भूजल में भी किया जा सकता है और समय-समय पर इसका प्रयोग एक सतत जल-स्त्रोत के रूप में किया जा सकता है। इस प्रकार का पुनः पूरित मीठा, जल खारे जल के जलभृत में एक बहुत वृहत्त गुब्बारे के रूप में होता हैं क्योंकि खारे जल व मीठे जल के घनत्व में अंतर होता है अर्थात मीठा जल, खारे जल की सतह पर तैरता है और इस तकनीक में गुरुत्वाकर्षण बल के कारण मीठा जल, खारे जल के जलभृत के मध्य दबाव के साथ छोड़ा जाता है जिससे कि वह एक गुब्बारे का रूप धारण कर लेता है।

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान ने इस क्षेत्र में कई शोध कार्य भी किए हैं जिसके सकारात्मक परिणाम प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार का एक शोध कार्य हरियाणा के मेवात क्षेत्र में राष्ट्रीय जलविज्ञान परियोजना के तहत PDS कार्यक्रम के अन्तर्गत किया जा रहा है।

एनिकट-एनिकट का निर्माण वर्षा-जल को नदी तल पर संचित करने के लिए किया जाता है जिससे कि क्षेत्र की जलग्रहण क्षमता बढ़े और उसे कृषि हेतु प्रयोग में लिया जा सके। किंतु क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियां ऐसी हैं जहां वाष्पीकरण अधिक मात्रा में होता है अतः वहां इस प्रकार की तकनीक इतनी कारगर सिद्ध नहीं होती है। यही कारण है कि वर्षाजल का संग्रहण जलभृतों में करना, जल हानि को कम करने से ज्यादा

यह तकनीक ऐसे हैण्डपम्प, बोरवेल पर कार्य कर सकती है जिनमें जल या तो बहुत कम हो या समाप्त हो गया हो इस तकनीक में बोर के चारों और जेसीबी की सहायता से स्थलाकृति के अनुसार गहरा गड्ढ़ा बनाया जाता हैं फिर उस गड्ढ़े को सबसे पहले बड़े-आकार के पत्थरों, फिर मझोले आकार के पत्थरों, और अंत में कंक्रीट डालकर परत दर परत बंद किया जाता है उसके पश्चात उस क्षेत्र में व्यर्थ बहने वाले वर्षा जल को उपयुक्त प्रवणता द्वारा इस अन्तःस्यंदन कूप की ओर स्थानांतरित कर दिया जाता है जिससे वर्षा के समय व्यर्थ होने वाला जल उक्त हैण्डपम्प/बोरवेल के भूजल को पुनः पूरित कर सके इस तकनीक में संग्रहित जल को वाष्पोत्सर्जन द्वारा होने वाली हानि से भी बचाया जा सकता है।

सुरक्षित एवं प्रभावी तरीका है।

उपसतही बंड

इस प्रकार की संरचनाओं का प्रयोग ऐसे स्थानों पर किया जाता है जहां वर्षाऋतु में जल कुछ समय के लिए प्रवाहित होता है इस क्षेत्र को मौसमी नदी प्रवाह कहते हैं। थार मरुस्थल क्षेत्र के कुछ भाग में पहाड़ भी हैं वर्षा होने पर इनकी ढलानों से जो जल प्रवाहित होता है वह आसपास के जलभृतों को पुनः पूरित करता है जिसके कारण इन क्षेत्रों में

जल जीवन मिशन द्वारा राजस्थान में जल समाधान हेतु प्रयास।

मीठे जल की उपलब्धता रहती है और इन क्षेत्रों के आसपास कृषि कार्य एवं पेय-जल की आपूर्ति के लिए बहुत से बोरवेल पाए जाते हैं। किंतु ग्रीष्मऋतु काल में अधिकांश बोरवेल में या तो जल स्तर अत्यधिक नीचे चला जाता है या फिर जल की गुणवत्ता में कमी आ जाती है। ऐसे क्षेत्रों में बंड्स की सहायता से जलप्रवाह के वेग को कम किया जाता है जिससे कि जल का रिसाव अधिक हो और जलभृतों में जल का अधिक संग्रहण किया जा सके। यह बंड्स पॉलिथीन की सहायता से मिट्टी भरकर नदी तल के नीचे स्थापित किए जाते हैं। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि जल जितना पृथ्वी की सतह के ऊपर प्रवाहित होता है उससे कई गुना अधिक पृथ्वी के नीचे भूजल के रूप में भी प्रवाहित होता है। इन बंड्स का कार्य पृथ्वी की सतह के ऊपर प्रवाहित होने वाले इसी जल को भूजल में पुनः पूरित करना होता है।

रेतीले बाँध-यह उप सतही बंड्स का ही परिशोधित रूप है इसमें बंड का निर्माण कंक्रीट और पत्थर की सहायता से किया जाता है जिससे कि वर्षाकाल में बहते हुए जल को मृदा के नीचे एक जल मृदा हौदी के रूप में एकत्रित किया जा सके। ऐसे में जब भी जल इस संरचना के स्पिलवे से होकर गुजरेगा तो अपने साथ बहकर आने वाली गाद को अपने पीछे एकत्र करेगा। यह मृदा हर वर्षा-ऋतु में एक स्पंज का कार्य करेगी और हर वर्षाकाल में जब जल इस पर से बहेगा, यह स्पंज जल का अवशोषण कर जलभृत का पुनःपूरण कर सकेगा। वास्तव में यह तकनीक अफ्रीका महाद्वीप के केन्या देश में अपनाई गई थी जिसका प्रयोग पश्चिमी राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में किया गया है।

यद्यपि इस प्रकार की परियोजनाएं बहुतायत से राज्य सरकार और केंद्र सरकार के वित्तीय योगदान से विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत चलाई जा रही हैं। क्योंकि जल की आवश्यकता को लिंग जाति के आधार पर नहीं विभाजित किया जा सकता है इसीलिए जल-शक्ति मंत्रालय द्वारा प्रारम्भ की गई योजनाएं भारत के प्रत्येक नागरिक के लिए आवश्यक हैं। मरुस्थली क्षेत्रों में इस प्रकार की परियोजनाओं के दोहरे एवं चुनौतीपूर्ण कार्य करने होंगे जैसे कि जल आपूर्ति हेतु सतत जल-स्त्रोत सुनिश्चित करना, भौगोलिक रूप से एक कम घनत्व वाले क्षेत्र में प्रत्येक घर तक नल से जल पहुंचाने का प्रबंधन एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

संपर्क करें:
वरुण गोयल, डॉ. वी.सी. गोयल, राजेश अग्रवाल, एवं इ. ओमकार सिंह
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रुड़की।